# तज़किरा

(तिमाही)

تذکرہ

(سہ ماہی)

मई 2025 - जुलाई 2025 / वर्ष -1 अंक -3 मूल्य : ₹100

T

A

Z

K

I

R

A

# تذکرہ

(سہ ماہی)

**अंक-3, वर्ष-1**

| | |
|---|---|
| प्रधान संपादक: | असग़र मेहदी |
| संपादक: | फ़रज़ाना महदी |
| संपादक (कला एवं संस्कृति): | शहज़ाद रिज़वी |
| संपादक मण्डल: | नदीम हसनैन,<br>राकेश कुमार मिश्र,<br>कौशल किशोर,<br>डॉ. बिभाष कुमार श्रीवास्तव<br>वीरेंद्र त्रिपाठी, (क़ानूनी सलाहकार)<br>अलीज़ा मेहदी,<br>ज़ाहिद ख़ान |
| लेज़र टाइप सेटिंग: | डीप इंक, लखनऊ |
| मूल्य: | एक प्रति ₹ 100.00 |
| संपर्क: | फ़र्स्ट फ़्लोर सी बी चैंबर्स, वी मार्ट के सामने, तहसीन गंज तिराहा, हरदोई रोड, लखनऊ 226003 |

**समस्त क़ानूनी विवादों का न्यायक्षेत्र लखनऊ, उत्तर प्रदेश होगा।**

# अनुक्रम

संपादकीय 6

इज़हार 11

**विमर्श**

“द सैटेनिक वर्सेस”, ओरिएंटलिज़्म और इस्लाम की एंग्लो-सैक्सन समझ - भाग 1 33

*असग़र मेहदी*

इब्ने रुश्द (बाबा-ए-‘अक़्लियत-पसंदी) 63

*राकेश मिश्रा कुमार*

संघ: इतिहास और असली एजेण्डा 94

*सत्यम वर्मा*

छप्पन वैष्णवों की वार्ता 120

*अजय कुमार*

**ख़िराज-ए-तहसीन**

ज़किया जाफ़री: फ़ासीवाद को आंख दिखाती एक योद्धा 133

*सीमा आज़ाद*

नासिरा शर्मा से फ़रज़ाना महदी की बातचीत 140

‘कास्ट बेस्ड’ मर्दुम-शुमारी (जातीय जनगणना) और मुस्लिम समाज के सरोकार 162

*रफ़त फ़ातिमा*

**अदब व साहित्य**

"ज़र्द पत्तों की बहार" 178

*वीर विनोद छाबड़ा*

**कहानी**

ज़हर थोड़ा सा 185

*राम ला 'ल (ट्रांसलिट्रेशन- असग़र मेहदी)*

ग़ज़ा 190

*अब्दुल ग़फ़्फ़ार*

टुकड़े-टुकड़े आदमी 201

*बादशाह हुसैन रिज़वी*

**कविता/नज़्म**

तेल के सौदागर 217

*नून मीम राशिद*

आज 6 दिसंबर है 222

*नूर आलम*

‘माँ को आख़िरी ख़त’ 226

*महमूद दरवेश (1941-2008)*

गुलफ़िशां 239

*रूप रेखा वर्मा*

**कला/ संस्कृति**

'शिल्पाचार्य' ज़ैनुल आबेदीन 241

*पंकज निगम*

**सिनेमा**

‘नो अदर लैंड’ –संघर्ष का एक दस्तावेज़ 261

*असग़र मेहदी*

**पुस्तक समीक्षा**

‘बिटवीन होप एन्ड डिस्पेयर’ 276

*समीक्षा: प्रो. रमेश दीक्षित*

1857 की जंगे आजादी और मौलवी लियाक़त अली- सीमा आज़ाद 297

*समीक्षा: कौशल किशोर*

‘सर सैयद इन आगरा’- फ़िरोज़ नक़वी 308

*समीक्षा: असग़र मेहदी*

तज़किरा की सिफ़ारिश-6 किताबें 320

दो शख़्सियतें 324

स्टॉप प्रेस 328

# संपादकीय

शांति यानी अमन, इंसान का अब मक़सद है और ना कभी था, यह एक राजनैतिक हथियार के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। इसके विपरीत युद्ध यानी जंग, की अपनी डायनामिक्स है। अमन सिर्फ़ एक शायराना ख़्वाब है, या फिर रसेल के जज़्बात का एक रंग, साहिर जंग को एक समस्या बताते हैं लेकिन ज़मीन पर हक़ीक़त कुछ और है,, 'पहलगाम' के बाद जब एक बड़े युद्ध के आसार पैदा हुए तो अनेक नज़रिये सामने थे, लेकिन 'अंत' पर सबने राहत की सांस ली।

तज़किरा के इस शुमारे के 'इज़हार' कालम में उर्दू पर सुप्रीम कोर्ट के फ़ैसले, पहलगाम क़त्लेआम, बानो मुश्ताक़ की इल्मी सर्गमियों, और फ़िलिस्तीनीयों पर जारी अत्याचार पर दुनिया की ख़मोशी के हवाले से इज़हार ए ख़्याल किया गया है। फ़िलीस्तीन के हालात बद से बदतर हो चुके हैं अब उनका वजूद ही ख़तरे में है। दुनिया बेचैन है लेकिन मौजूदा हालात में 'व्यापार' ही ईमान है और यही सही-ग़लत को तय करने का मेयार है।

सलमान रश्दी की विवादित नॉवल 'द सैटेनिक वर्सेस' भारत में अब उपलब्ध है, 36 साल बाद । इस नॉवेल में बतौर ड्रीम सिक्वेंस  बयान हुए 'थीम' हज़ार साल से

बाज़गश्त करते रहे हैं,, इनके इतिहास और ख़ास मक़सद की तकमील पर असग़र मेहदी के लेख का पहला भाग इस अंक में शामिल किया गया है।

इब्ने रुश्द की ज़िंदगी, नज़रयात और फ़लसफ़े पर राकेश कुमार मिश्रा का एक जामे मज़मून शामिल किया गया है। अक्सर का शायद यही विचार है कि मानवीय नैतिकता का विस्तार युगों-युगों से हुआ है और हम समय के साथ-साथ अधिक सहिष्णु और खुले विचारों वाले बन गए हैं। सहिष्णुता के संदर्भ में जब यूरोप अंधकारयुग में था, तो क्या दुनिया में कोई ऐसी जगह थी जिसे बेहतर विकल्प के तौर पर पसंद किया जा सकता हो? जी, आज से हज़ार साल पहले ऐसी जगह थी-स्पेन के दक्षिण में एक ऐसा शहर था जहां का नागरिक होना ही काफ़ी था, इस शहर का नाम था क़ुरतबा (कॉर्डोबा-Córdoba), पाँच लाख की आबादी वाले शहर (जबकि लंदन और पेरिस की सम्मिलित आबादी बीस हज़ार से ज़्यादा नहीं थी), में अलग-अलग समुदाय एक ही स्थान पर, अपेक्षाकृत शांति से, लंबे समय तक रहे। कॉन्विवेंसिया के रूप में जाने जाने वाले युग में ये जगह थी कि जब यहूदी, ईसाई और मुसलमान एक साथ रहते थे और अपने गहरे मतभेदों और स्थायी शत्रुता के बावजूद, सहिष्णुता की संस्कृति का निर्माण कर रहे थे। सवाल उठता है कि यह सब कैसे संभव हुआ? निश्चित रूप से एक साझा भाषा, संस्कृति के विकास में सभी तबक़ों का योगदान था, और इसके लिए मौक़ा दिया धार्मिक रवादरी ने, धार्मिक आज़ादी और अभिव्यक्ति की

रवायत ने, जिसने सहिष्णुता और पारस्परिक सम्मान की संस्कृति को बनाए रखा। इस परिवेश की पृष्ठभूमि में हम इब्ने रुश्द को समझने की कोशिश करते हैं।

इतिहास गवाह है कि फ़ासिस्ट निज़ाम बिना झूठ बोले, लिखे और सुने एक दिन भी ज़िंदा नहीं रह सकता। यह निज़ाम झूठ गढ़ता है,, अपने अतीत का, वर्तमान का, लेकिन भविष्य इसके हाथ में नहीं है,, भारत में फ़ासीवादी विचारधारा के पनपने और विकसित होने के  तरतीबवार इतिहास के संदर्भ में सत्यम वर्मा के एक लेख को शामिल किया गया है। वरिष्ठ संस्कृति कर्मी और लेखक अजय कुमार के लेख 'छप्पन वैष्णवों की वार्ता' में शीराज़ ए हिन्द 'जौनपुर' की इल्मी हस्तियों का मुख़्तसर लेकिन इतना जामे बयान आपको शायद ही कहीं मिले। सीमा आज़ाद ने एक लेख 'फ़ासीवाद को आंख दिखाती एक योद्धा' में शानदार तरीक़ा से ज़किया जाफ़री को याद करते हुए ख़िराज-ए-अक़ीदत पेश किया है। हमारे समय की मशहूर मुसन्निफ़ा और पत्रकार नासिरा शर्मा से अनेक मुद्दों पर फ़रज़ाना महदी की बातचीत तज़किरा के इस अंक का ख़ास आकर्षण है। रफ़त फ़ातिमा का जातीय जनगणना पर लेख एक अच्छा विमर्श है।

अदब और साहित्य के कालम में वीर विनोद छाबड़ा ने 'ज़र्द पत्तों की बहार', अपने वालिद और उर्दू के मशहूर मुसन्निफ़ राम लाल जी को बतौर ख़िराजे अक़ीदत लिखा है।  इसके साथ तीन कहानियां – ज़हर थोड़ा सा (राम लाल), ग़ज़ा (अब्दुल ग़फ़्फ़ार) और टुकड़े-टुकड़े आदमी (बादशाह हुसैन), अपने समय की मानव त्रासदियों